भगवान् शिव के कुछ प्रसिद्ध स्थान

द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों तथा अष्टमूर्तियों के अतिरिक्त भगवान् शिव के सैकड़ों प्रसिद्ध स्थान हैं। जिनमें से कुछ स्थानों का संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है।

1–मदुरा

त्रिचिनापल्ली–तूतीकोरिन लाइन पर त्रिचिनापल्ली से 150 कि. मी. दूर मदुरा (मधुरै) नगर है। जो यात्री रामेश्वर–यात्रा करके मदुरा आतें हैं, उन्हें रामेश्वर से आगे मानामदुरै जंकशन पर गाड़ी बदलनी पड़ती है। मानामदुरै से मदुरा रेल आती है। मानामदुरै से मदुरा की दूरी 30 मील है। यह नगर 'वेगा' नदी के किनारे है। संस्कृतग्रन्थों में इसका नाम 'मधुरा' मिलता है। इसे 'दक्षिणमथुरा' भी कहा जाता है।

मीनाक्षी–मन्दिर

स्टेशन से पूर्व दिशा में लगभग एक मील पर मदुरा नगर के मध्यभाग में मीनाक्षी का मन्दिर है। यह मन्दिर अपनी निर्माण–कला की भव्यता के लिये सर्वत्र प्रसिद्ध है। मन्दिर लगभग 22 बीघे भूमि पर बना है। इसमें चारों ओर चार मुख्य गोपुर हैं। वैसे सब छोटे–बड़े मिलाकर मन्दिर में 27 गोपुर हैं। सबसे अधिक ऊँचा दक्षिण का गोपुर है। और सबसे सुन्दर पश्चिम का गोपुर है। बड़े गोपुर ग्यारह मंजिल ऊँचे हैं।

सामान्यत: पूर्व–दिशा से लोग मन्दिर में जाते हैं। किन्तु इस दिशा का गोपुर अशुभ माना जाता है। कहते हैं, इन्द्र को वृत्रवध के कारण जब ब्रह्महत्या लगी, तब वे इसी मार्ग से भीतर गये और यहाँ के पवित्र सरोवर में कमल–नाल में स्थित रहे। उस समय यहीं द्वार पर ब्रह्महत्या इन्द्र के मन्दिर से निकलने की प्रतीक्षा करती खड़ी रही। इससे यह गोपुर अपवित्र माना जाता है। गोपुर के पास में एक दूसरा प्रवेश–द्वार बनाया गया है, जिससे लोग आते–जाते हैं।

गोपुर में से प्रवेश करने पर पहले एक मण्डप मिलता है, जिसमें फल–फूल की दूकानें रहती हैं। उसे 'नगार–मण्डप' कहते हैं। उसके आगे अष्ट–शक्ति मण्डप है। इसमें स्तम्भों के स्थान पर आठ लक्ष्मियों की मूर्तियाँ छत का आधार बनी हैं। यहाँ द्वार के दाहिने सुब्रह्मण्यम् तथा बायें गणेश की मूर्ति है। इससे आगे मीनाक्षीनायकम्–मण्डप है। इस मण्डप में दूकानें रहती हैं। इस मण्डप के पीछे एक 'अँधेरा मण्डप' मिलता है। उसमें भगवान् विष्णु के मोहिनीरूप, शिव, ब्रह्मा, विष्णु तथा अनसूयाजी की कलापूर्ण मूर्तियाँ हैं।

अँधेरे मण्डप से आगे स्वर्ण–पुष्करिणी सरोवर है। कहा जाता है ब्रह्महत्या लगने पर इन्द्र इसी सरोवर में छिपे थे। तमिल में इसे 'पोत्तामरै–कुलम्' कहते हैं। सरोवर के चारों ओर मण्डप हैं। इन

मण्डपों में तीन ओर भित्तियों पर भगवान् शङ्कर की 64 लीलाओं के चित्र बने हैं।

पुरुष-मृगमण्डप के सामने ही मीनाक्षीदेवी के निज मन्दिर का द्वार है। कई ड्योढ़ियों के भीतर श्रीमीनाक्षीदेवी की भव्य मूर्ति है। बहुमूल्य वस्त्राभरणों से देवी का श्यामविग्रह सुभूषित रहता है। मन्दिर के महामण्डप के दाहिनी ओर देवी का शयन-मन्दिर है। मीनाक्षी-मन्दिर का शिखर स्वर्ण-मण्डित है। मन्दिर के सम्मुख बाहर स्वर्ण-मण्डित स्तम्भ है। मीनाक्षी-मन्दिर की भीतरी परिक्रमा में अनेक देवमूर्तियों के दर्शन होते हैं। निजमन्दिर के परिक्रमा मार्ग में ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति, बलशक्ति की मूर्तियाँ बनी हैं। परिक्रमा में सुब्रह्मण्यम्, मन्दिर के एक भाग के निर्माता नरेश तिरुमल तथा उनकी दो रानियों आदि की मूर्तियाँ भी हैं।

मीनाक्षी-मन्दिर से दर्शन करके बाहर निकलकर सुन्दरेश्वर मन्दिर की ओर चलने पर मीनाक्षी तथा सुन्दरेश्वर मन्दिरों के मध्य स्थित द्वार के सामने गणेशजी का मन्दिर है। इसमें गणेशजी की विशाल मूर्ति है। यह मूर्ति 'वंडीपूर' सरोवर खोदते समय भूमि में मिली थी। वहाँ से लाकर यहाँ प्रतिष्ठित की गयी है।

सुन्दरेश्वर

सुन्दरेश्वर-मन्दिर के प्रवेश द्वार पर द्वारपालों की मूर्तियाँ हैं। इन प्रस्तर मूर्तियों से आगे द्वारपालों की दो धातु-प्रतिमाएँ हैं। सुन्दरेश्वर मन्दिर के सम्मुख पहुँचने पर प्रथम नटराज के दर्शन होते हैं। इन्हें 'वेल्ली-अंबलम्' चाँदी से मढ़ा हुआ कहते हैं। यह ताण्डव-नृत्य करती भगवान् शिव की मूर्ति चिदम्बरम् की नटराज-मूर्ति से बड़ी है। मूर्ति के मुख को छोड़कर सर्वाङ्ग पर चाँदी का आवरण चढ़ा है। चिदम्बरम् में नटराज-मूर्ति का वामपद ऊपर उठा है और यहाँ दाहिना पद ऊपर उठा है।

सुन्दरेश्वर मन्दिर के सामने भी स्वर्णमण्डित स्तम्भ है और मन्दिर का शिखर भी स्वर्णमण्डित है। कई ड्योढ़ियों के भीतर अर्घे पर सुन्दरेश्वर स्वयम्भूलिङ्ग सुशोभित है। उस पर स्वर्ण का त्रिपुण्ड्र लगा है।

मन्दिर के बाहर जगमोहन में आठ स्तम्भ हैं, जिनपर भगवान् शङ्कर की विविध लीलाओं की अत्यन्त सजीव मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। इनका शिल्पनैपुण्य अद्‌भुत है। यहीं द्वार के सम्मुख चार स्तम्भों का एक मण्डप है, जिसमें पत्थर में ही शृङ्खला बनायी गयी है। इस शृङ्खला की कड़ियाँ लोहे की शृङ्खला के समान घूम सकती हैं। यहीं पर वीरभद्र एवं अघोरभद्र की विशाल उग्र-मूर्तियाँ शिवगणों के सामर्थ्य की प्रतीक के समान स्थित हैं।

इस मण्डप में भगवान् शङ्कर के ऊर्ध्वनृत्य की अद्‌भुत कलापूर्ण विशाल मूर्ति है। ताण्डवनृत्य करते हुए शङ्करजी का एक चरण ऊपर कान के समीपतक पहुँच गया है। पास ही उतनी ही विशाल

काली-मूर्ति है।

इसी मण्डप में एक ओर 'कारैक्काल्अम्मा' नामक शिव-भक्ता की मूर्ति है। नवग्रह-मण्डप में नवग्रहों की मूर्तियाँ हैं। निजमन्दिर की परिक्रमा में गणपति, हनुमान्जी, दण्डपाणि, सरस्वती, दक्षिणामूर्ति, सुब्रह्मण्यम् आदि अनेक देवताओं के दर्शन होते हैं। परिक्रमा में प्राचीन कदम्ब वृक्ष का अवशेष सुरक्षित है। उसके समीप ही दुर्गाजी का छोटा मन्दिर है। यहीं कदम्ब वृक्ष के मूल में भगवान् सुन्दरेश्वर(शिव) ने मीनाक्षी का पाणिग्रहण किया था।

मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम उत्सवमण्डप में मीनाक्षी-सुन्दरेश्वर, गङ्गा और पार्वती की स्वर्णमूर्तियाँ हैं। परिक्रमा में पश्चिम ओर एक चन्दनमय महालिङ्ग है।

मन्दिर के सम्मुख एक मण्डप में नन्दी की मूर्ति हैं। वहाँ से सहस्त्र-स्तम्भ मण्डप में जाते हैं। इस सहस्त्र-स्तंभ मण्डप में सचमुच एक हंजार खम्भे नहीं है, चार-पाँच सौ होंगे। यह नटराज का सभामण्डप है। इस सहस्त्र-स्तम्भ मण्डप में मनुष्याकार से भी ऊँची शिवभक्तों तथा देव-देवियों की मूर्तियाँ हैं। इनमें से वीणाधारिणी सरस्वती की मूर्ति बहुत कलापूर्ण एवं आकर्षक है। इस मण्डप में श्रीनटराज का श्यामविग्रह प्रतिष्ठित है। इसी मण्डप में शिवभक्त 'कण्णप्प' की भी खड़ी मूर्ति है।

बड़े मन्दिर के पूर्व एक शतस्तम्भ मण्डप है। जिसके समीप ही मीनाक्षी-कल्याण-मण्डप है। चैत्र महीने में इसमें मीनाक्षी-सुन्दरेश्वर का विवाह महोत्सव होता है। इस उत्सव के समय मीनाक्षी-सुन्दरेश्वरविवाह हो जाने पर यहीं अनेक वर-वधुएँ बहुत अल्प-व्यय में अपना विवाह सम्पन्न कराती हैं।

मन्दिर के पूर्व गोपुर के सामने 'पुदुमण्डप' है, जिसे 'वसन्त-मण्डप' भी कहते हैं। इसमें प्रवेशद्वार पर घुड़सवारों तथा सेवकों की मूर्तियाँ हैं। भीतर शिव-पार्वती के पाणिग्रहण की पूरे आकार की मूर्ति है। पास में भगवान् विष्णु की मूर्ति है। नटराज की भी इसमें मनोहर मूर्ति है।

पूर्व गोपुर के पूर्वोत्तर सप्तसमुद्र नामक सरोवर है। कहा जाता है, मीनाक्षी की माता काञ्चनमाला की समुद्र-स्नान की इच्छा होने पर भगवान् शङ्कर ने इस सरोवर में सात धाराओं में सातों समुद्रों का जल प्रकट कर दिया था।

मदुरा को 'उत्सव-नगरी' कहा जाता है। यहाँ बराबर उत्सव चलते ही रहते हैं। चैत्र महीने में मीनाक्षी-सुन्दरेश्वर-विवाहोत्सव होता है, जो दस दिनतक चलता है। इस समय रथ-यात्रा होती है। वैशाख में शुल्कपक्ष की पञ्चमी से आठ दिनतक वसन्तोत्सव होता है। आषाढ़-श्रावण के पूरे महीने उत्सव के हैं। आषाढ़ में मीनाक्षी देवी की विशेष पूजा होती है। श्रावण में भगवान् शङ्कर की 64 लीलाओं के स्मरणोत्सव होते हैं। ये लीलाएँ भगवान् शङ्कर ने मीनाक्षी के साथ मदुरा में प्रत्यक्ष की

थीं, ऐसा माना जाता है। भाद्रपद में तथा आश्विन में नवरात्र महोत्सव एवं अमावस्या–पूर्णिमा के विशेषोत्सव होते हैं। मार्गशीर्ष में आर्द्रा नक्षत्र में नटराज का अभिषेक होता है और अष्टमी को वे कालभैरव ग्राम की रथयात्रा करते हैं। पौष–पूर्णिमा को मीनाक्षीदेवी की रथयात्रा होती है। माघ में शिव–भक्तों के स्मरणोत्सव तथा फाल्गुन में मदन–दहनोत्सव होता है। फाल्गुन में ही सुब्रह्मण्यम् की विवाह–यात्रा मनायी जाती है।

मन्दिर के संबंध में निम्न कथा प्रचलित है। कहा जाता है, पहले यहाँ कदम्ब–वन था। कदम्ब के एक वृक्ष के नीचे भगवान् सुन्दरेश्वर का स्वयम्भूलिङ्ग था। देवता उसकी पूजा कर जाते थे। श्रद्धालु पाण्ड्य–नरेश मलयध्वज को इसका पता लगा। उन्होंने उस लिङ्गमूर्ति के स्थान पर मन्दिर बनवाने तथा वहीं नगर बसाने का संकल्प किया। स्वप्न में भगवान् शङ्कर ने राजा के संकल्प की प्रशंसा की और दिन में एक सर्प के रूप में स्वयं आकर नगर की सीमा का भी निर्देश कर गये।

पाण्ड्य–नरेश के कोई संतान नहीं थी। राजा मलयध्वज ने अपनी पत्नी काञ्चनमाला के साथ संतान–प्राप्ति के लिये दीर्घकालतक तपस्या की। राजा की तपस्या तथा आराधना से प्रसन्न होकर भगवान् शङ्कर ने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया और आश्वासन दिया कि उनके एक कन्या होगी।

साक्षात् भगवती पार्वती ही अपने अंश से राजा मलयध्वज के यहाँ कन्यारूप में अवतीर्ण हुईं। उनके विशाल सुन्दर नेत्रों के कारण माता–पिता ने उनका नाम मीनाक्षी रखा। राजा मलयध्वज कुछ काल पश्चात् कैलासवासी हो गये। राज्य का भार रानी काञ्चनमाला ने सम्हाला।

मीनाक्षी के युवती होने पर साक्षात् भगवान् सुन्दरेश्वर ने उनसे विवाह करने की इच्छा व्यक्त की। रानी काञ्चनमाला ने बड़े समारोह से मीनाक्षी का विवाह सुन्दरेश्वर शिव से कर दिया।

2– तंजौर

कुम्भकोणम् से 24 मील पर तंजौर स्टेशन है। यह बड़ा नगर कावेरी के तट पर बसा है। बृहदीश्वर–मन्दिर ही यहाँ का मुख्य मन्दिर है। तंजौर में दो किले हैं। एक किला स्टेशन से उत्तर है, उसे बड़ा किला कहते हैं; दूसरा किला स्टेशन से पश्चिम है। स्टेशन से सीधे रास्ते (पगडंडी द्वारा) आने पर यह बहुत निकट पड़ता है। सड़क के मार्ग से लगभग एक कि. मी. पर है। इस छोटे किले में ही बृहदीश्वर–मन्दिर है।

कहा जाता है कि चोलवंश के राजराजेश्वर(या राजराजा) नामक नरेश को स्वप्न में आदेश हुआ कि 'नर्मदा में मेरा एक सैकत लिंगमय महान् विग्रह है, उसे ला कर स्थापित करो।' उस स्वप्नादेश के अनुसार बृहदीश्वर लिङ्गमूर्ति नर्मदा से लायी गयी। सात वर्ष में मन्दिर तैयार हुआ। भगवान् की मूर्ति के अनुरूप नन्दीश्वर की मूर्ति की चिन्ता राजा को हुई। उस समय फिर स्वप्न में नन्दी–मूर्ति का स्थान

भगवान् ने ही बताया। उस स्वप्न के अनुसार नन्दी की विशाल मूर्ति 400 मील दूर से यहाँ लायी गयी। यह मन्दिर 1003 ई० में तैयार हुआ।

छोटे किले का घेरा लगभग 1 मील का है। इसके दक्षिण में कावेरी की नहर है। किले में पूर्व द्वार से प्रवेश होता है। किले के तीन ओर गहरी खाई है। किले में ही एक ओर शिवगङ्गा सरोवर है।

किले में प्रवेश करने पर पहली कक्षा के मैदान के पश्चात् गोपुर है। गोपुर के भीतर एक चौकोर मण्डप है। उसमें चबूतरे पर विशाल नन्दी-मूर्ति है। वह नन्दी 16 फुट लंबा, 13 फुट ऊँचा, 7 फुट मोटा एक ही पत्थर का है। इसको 700 मन भारी बताया जाता है। यह मूर्ति यहाँ 400 मील से लायी गयी थी। विशालता में इस नन्दी का दूसरा नम्बर है।[1]

नन्दी-मण्डप के सामने ऊँचे चबूतरे पर विशाल बृहदीश्वर मन्दिर है। मन्दिर में सामने जगमोहन है, फिर दो बड़े विशाल कमरे हैं। उनके अन्त में मुख्य मन्दिर है। इस मुख्य मन्दिर का शिखर 216 फुट ऊँचा है। शिखर पर स्वर्ण-कलश है। वह कलश जिस पत्थर पर है, कहा जाता है वह 80 टन वजन का है। उन दिनों, जब क्रेन आदि आधुनिक यान्त्रिक साधन नहीं थे, इतना भारी पत्थर इतने ऊँचे चढ़ाकर बैठा देना अद्भुत बात है। यह पत्थर भी अनुमानतः बहुत दूर से लाया गया होगा; क्योंकि पूरे तंजौर जिले में(जो बहुत बड़ा है) तथा उसके आस-पास कोई पहाड़ी नाम के लिये भी नहीं है।[2]

यह शिल्प-कौशल देखने देश-विदेश के यात्री आते हैं। मन्दिर में भगवान् शङ्कर की विशाल, बहुत मोटी और भव्य लिङ्गमूर्ति है। मूर्ति को देखकर लगता है कि बृहदीश्वर नाम यहाँ उपयुक्त ही है।

शिवमन्दिर के दक्षिण-पश्चिम गणेशजी का मन्दिर है। पश्चिमोत्तर भाग में सुब्रह्मण्य का सुन्दर मन्दिर है। उसमें षण्मुख स्वामिकार्तिक की भव्य मूर्ति है। सुब्रह्मण्य-मन्दिर के दक्षिण एक छोटे मन्दिर में धूनी है। यहाँ एक सिद्ध महात्मा रहते थे। शिव-मन्दिर के पूर्वोत्तर चण्डी-मन्दिर है।

नन्दी-मण्डप के उत्तर पार्वतीजी का पृथक मन्दिर है। इसका जगमोहन भी विस्तृत है। कई ड्योढ़ी पार करके पार्वतीजी की भव्य झाँकी प्राप्त होती है।

बृहदीश्वर मन्दिर की परिक्रमा में दो ओर बरामदों में शिवलिङ्गों की पंक्तियाँ लगी हैं। मन्दिर की पहली कक्षा में उत्तरी द्वार से जाने पर गोशाला मिलती है। उसी मार्ग पर आगे शिवगङ्गा-सरोवर

1. विशालता में प्रथम स्थान रखनेवाला नन्दी लेपाक्षी, जो आन्ध्रप्रदेश के अनन्तपुर के पास है, में है।

2. कहा जाता है कि यह कारीगरी से युक्त तराशा हुआ विशालकाय पत्थर 6 मील(9 कि. मी.) लम्बे(इसी उद्देश्य से निर्मित) झुके तल पर से सरकाते हुए इतनी ऊँचाई तक पहुँचाया गया। यही तकनीक मिश्र के पिरामिडों के विशालकाय पत्थरों को ऊपर पहुँचाने के लिये किया गया था।

है। यह सरोवर विस्तृत है। उसपर पक्के घाट हैं। सरोवर का जल कुछ लाल रंग का है।

तंजौर का पौराणिक इतिहास इस प्रकार है। पुराणों के अनुसार यह पाराशर-क्षेत्र है। पूर्वकाल में यह स्थान तञ्जन् नामक राक्षस का निवासस्थान था। उसके साथ और भी बहुत से राक्षस रहते थे। देवासुर-संग्राम में वे सब राक्षस देवताओं द्वारा मारे गये। भगवान् विष्णु ने नीलमेघ पेरुमाल् के रूप में तञ्ज को युद्ध में मारा। मरते समय तञ्ज ने भगवान् से प्रार्थना की कि 'मेरी निवासभूमि मेरे नाम से प्रख्यात हो और पवित्रस्थली मानी जाय।' इसी के फलस्वरूप इस क्षेत्र का नाम तंजावूर(तञ्जौर) हुआ। यह 'तञ्जपुर' का ही तमिल रूपान्तर है।

3 – पक्षितीर्थ

मद्रास-धनुषकोटि लाइन पर मद्रास से 35 मील दूर चेंगलपट स्टेशन है। चेंगलपट मद्रास प्रदेश (चेन्नई) का जिला है और अच्छा नगर है। चेंगलपट से पक्षितीर्थ 15 कि. मी. है। मद्रास से चेंगलपट होती मोटर-बस पक्षितीर्थ-तिरुक्कुलुक्कुन्नम्तक जाती है।

पक्षितीर्थ में वेदगिरि नामक पर्वत है। यह पर्वत ही तीर्थस्वरूप माना जाता है। वेदगिरि की परिक्रमा होती है। पर्वत के नीचे पक्षितीर्थ बाजार है। यहाँ यात्रियों के ठहरने के लिये धर्मशाला है।

बाजार के एक ओर शङ्खतीर्थ नामक सरोवर है। कहते हैं, बारह वर्ष में जब गुरु कन्याराशि में आते हैं, तब इस सरोवर में एक शङ्ख उत्पन्न होता है। उस समय यहाँ पुष्कर-महोत्सव मनाया जाता है। बड़ी भारी भीड़ एकत्र होती है। इस तीर्थ में यात्री स्नान कर पहाड़ पर चढ़ते हैं।

शङ्खतीर्थ सरोवर से कुछ दूरी पर बाजार के दूसरे सिरे पर एक प्राचीन शिव-मन्दिर है। मन्दिर विशाल है। इसे रुद्रकोटिक्षेत्र कहा जाता है। मन्दिर में भगवान् शङ्कर का लिङ्गविग्रह है। उसे रुद्रकोटि-लिङ्ग कहते हैं। मन्दिर में ही पृथक् पार्वतीजी का मन्दिर है। यहाँ पार्वतीजी को 'अभिरामनायकी' कहते हैं। मन्दिर के पास ही रुद्रकोटितीर्थ नामक सरोवर है।

पक्षितीर्थ बाजार के पास से ही वेदगिरि पर्वत पर जाने को सीढ़ियाँ बनी हैं। लगभग 500 सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती हैं। पर्वत के शिखर पर भगवान् शङ्कर का मन्दिर है। यहाँ मन्दिर का मार्ग संकीर्ण है। सीढ़ियों से ऊपर जाकर परिक्रमा करते हुए मन्दिर में जाना पड़ता है। मन्दिर में भगवान् शङ्कर का लिङ्गविग्रह है। इसे यहाँ दक्षिणामूर्ति(आचार्यविग्रह)-लिङ्ग मानते हैं। यह लिङ्गमूर्ति कदलीस्तम्भ की भाँति है। इसे स्वयम्भूलिङ्ग कहा जाता है। वहाँ सोमास्कन्द आदि देवता भी हैं। मुख्य मन्दिर के दर्शन करके परिक्रमा करते हुए लौटने पर संकीर्ण गली में ही बायीं ओर एक छोटा द्वार है, उसमें कुछ नीचे गुफा में पार्वतीजी की मूर्ति है।

मन्दिर के दर्शन करके कुछ नीचे उतरकर दाहिनी ओर थोड़ी सीढ़ियाँ जाती हैं। वहीं लोग पक्षियों के दर्शन करते हैं। पर्वत की समतल भूमि के पास एक लंबी ऊँची शिला है। उसके एक किनारे

पर एक कुण्ड है, जिसे गृध्र–तीर्थ कहते हैं। एक पुजारी वहाँ दस बजे दोपहर के बाद आ जाता है। वह पूर्वाभिमुख होकर घंटा बजाकर तथा कटोरी–तश्तरी पटककर बार–बार संकेत करता है। थोड़ी देर में दो काँक पक्षी आते हैं। वे कटोरी में और पुजारी के हाथ से भी भोजन ग्रहण करते हैं और पानी पीकर उड़ जाते हैं।

यह काँक पक्षी सफेद(मटमैले) रंग का, चील से कुछ बड़ा होता है, उत्तर–भारत राजस्थान में प्राय: होता है। यह गंदगी तथा कीड़े आदि खानेवाला गंदा पक्षी है। इसको चमरगिद्धा, मलगीधा, आदि कहते हैं। यहाँ इन पक्षियों को दूर पाल रक्खा गया है। कहा जाता है कि अलग–अलग स्थानों पर दो–दो करके आठ–दस पक्षी पाले हुए हैं। पुजारी के तश्तरी पटकने के संकेत पर उन्हें छोड़ दिया जाता है। एक निश्चित स्थान पर नित्य भोजन पाने के कारण वे वहाँ आ जाते हैं। उन्हें उनके पालने के स्थान पर मांसादि दिया जाता है, अत: वहाँ लौट जाते हैं।

पक्षियों के आने का समय निश्चित नहीं है। दस बजे से दो बजे के मध्य वे किसी समय आते हैं; क्योंकि पालने के स्थान से छूट जाने पर वे कितनी देर में वहाँ आयेंगे, यह निश्चित नहीं रहता। कभी एक पक्षी आता है, कभी दोनों बारी–बारी से आते हैं और कभी दोनों साथ आते हैं। प्राय: पर्वत पर पहले एक पक्षी आता है। फिर दोनों साथ आते हैं।

इन पक्षियों के पालने के स्थान बाजार से दूर पर्वत में छिपे स्थलोंपर हैं। पुजारी इन्हें मुनियों के अवतार बतलाता है।[1] कहा जाता है कि सत्ययुग में ब्रह्मा के आठ मानसपुत्र शिव के शाप से गीधपक्षी हो गये। उनमें से दो सत्ययुग के अन्त में, दो त्रेता के अन्त में और दो द्वापर के अन्त में मुक्त हो चुके। ये शेष दो कलियुग के अन्त में मुक्त हो जायँगे। पुजारी बतलाता है कि ये पक्षी चित्रकूटपर तपस्या करते हैं, त्रिवेणी(प्रयाग) में स्नान करके बद्रीनाथजी के दर्शन करने जाते हैं और वहाँ से मध्याह्न में यहाँ प्रसाद ग्रहण करने आते हैं। यह बात यहाँ के स्थल–पुराण में भी नहीं है। स्थलपुराण में सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग के प्रारम्भ में दो–दो मुनियों के शाप से गीध होने की बात तो है और युगान्त में मुक्त हो जाने की बात भी है; किंतु उसमें स्पष्ट वर्णन है कि इस युग में गीध हुए मुनि, अज्ञातरूप से वेदाचल पर तपस्या करते हैं। वे किसी को दर्शन देने नहीं आते। पुजारी लोगों को इन पक्षियों को नैवेद्य लगाने के लिये प्रेरेति करता है और उसके लिये दक्षिणा लेता है। जिन लागों ने नैवेद्य लगाने के लिये दक्षिणा दी हुई होती है, उन्हें पक्षियों के जाने पर उनका उच्छिष्ट प्रसाद देता है; किंतु इन गंदे पक्षियों की जूठन लेना कदापि उचित नहीं है।

कहा जाता है कि भगवान् शङ्कर की आज्ञा से नन्दीश्वर ने कैलास के तीन शिखरों को

1. कुछ लोगों का विश्वास है कि साक्षात् शिव–पार्वती ही उन पक्षियों के रूप में वहाँ आते हैं और भक्तों को कृतार्थ कर चले जाते हैं।

पृथ्वीपर स्थापित किया। उनमें एक श्रीशैल, दूसरा कालहस्ती में और तीसरा यह वेदगिरि है। इन तीनों पर्वतों पर भगवान् शङ्कर नित्य निवास करते हैं।[1]

यहाँ करोड़ रुद्रों ने भगवान् शिवकी पूजा की है तथा अनेक ऋषि, मुनि एवं देवताओं ने तपस्या की है। नन्दीने भी यहाँ तप किया है। यहाँ वेदाचल के पूर्व में इन्द्रतीर्थ, अग्निकोण में रुद्रकोटितीर्थ, दक्षिण में वसिष्ठतीर्थ, नैर्ऋत्यकोण में अगस्त्यतीर्थ, मार्कण्डेयतीर्थ तथा विश्वामित्रतीर्थ, पश्चिम में नन्दीतीर्थ, वरुणतीर्थ और पश्चिमोत्तर में अकलिकातीर्थ है।

4 – महाबलेश्वर

यह छोटा सा नगर बम्बई से दक्षिण की ओर करीब 300 कि. मी. दूर पश्चिमी घाट नामक पर्वतश्रेणी के ऊपर बसा हुआ है। रास्ता पूना होकर जाता है।

वाठर स्टेशन से महाबलेश्वर मोटर–बस जाती है। पूना से भी महाबलेश्वर मोटर–बस द्वारा जा सकते हैं। महाबलेश्वर वाठर स्टेशन से 40 मील और पूना से 78 मील दूर है।

यहाँ वर्षा में बहुत अधिक वर्षा होती है। यहाँ पास में ही एक पर्वत से कृष्णा नदी निकलती है। पर्वत से धारा एक कुण्ड में आती है और कुण्ड में से गोमुख से बाहर निकलती है। कृष्णा का उद्गम होने से यह पवित्र तीर्थ है। यहाँ महाबलेश्वर का प्राचीन मन्दिर है। दूसरा मन्दिर गोटेश्वर शिव का है।

मूल महाबलेश्वर तथा नवीन महाबलेश्वर में तीन मील का अन्तर है। मूल महाबलेश्वर के सम्बन्ध में कहा जाता है कि यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश ने तपस्या की थी। तपस्या के पश्चात् ब्रह्माजी ने यज्ञ किया। यज्ञ करते समय महाबल तथा अतिबल नाम के दो दैत्यों ने विघ्न प्रारम्भ किया। इसमें अतिबल को तो भगवान् विष्णु ने मार दिया, किन्तु महाबल तपोबल सम्पन्न था। वह किसी पुरुष के द्वारा अवध्य था। इसलिये देवताओं की प्रार्थना पर आदिमाया ने प्रकट होकर उसे मारा। उस समय मृत्यु से पूर्व महाबल दैत्य ने त्रिदेवों से वहाँ स्थित रहने तथा इस क्षेत्र को अपने नाम से प्रसिद्ध होने का वरदान माँग लिया। इसके पश्चात् ब्रह्मा का यज्ञ पूर्ण हुआ।

यहाँ महाबलेश्वररूप से भगवान् शङ्कर ने, अतिबलेश्वररूप से भगवान् विष्णु ने तथा कोटीश्वररूप से ब्रह्माजी ने नित्य निवास किया।

यहाँ पाँच नदियों का उद्गम है – सावित्री, कृष्णा, वेण्या, ककुद्मती (कोयन) और गायत्री। इनमें कृष्णा भगवान् विष्णु के, वेण्या शङ्करजी के और ककुद्मती ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न मानी जाती है।

यहाँ महाबलेश्वर – मन्दिर में महाबलेश्वर लिङ्ग पर रुद्राक्ष के आकार के छिद्र हैं, जो जलपूरित रहते हैं। उनसे बराबर जल निकलता रहता है। कहा जाता है उसी जल से पाँचों नदियों का उद्गम

1. यहाँ का मंदिर वहाँ के शिलालेखों के अनुसार 2000 वर्ष पुराना है।

होता है।

ब्रह्माजी ने जहाँ यज्ञ किया था, वह स्थान वन में है। उसे ब्रह्मारण्य कहा जाता है। महाबलेश्वर–मन्दिर से यह स्थान तीन मील दूर है। यह वन बहुत भयंकर दीखता है। यहाँ वन्यपशुओं का भय रहता है। वहाँ एक गुफा है। कहा जाता है इसी में यज्ञवेदी थी।

महाबलेश्वर में महाबलेश्वर, अतिबलेश्वर तथा कोटीश्वर–ये तीन प्राचीन मन्दिर तो हैं ही, कृष्णाबाई का मन्दिर भी प्राचीन है। कृष्णाबाई–मन्दिर के पास बलभीम–मन्दिर है। इसमें समर्थ रामदास स्वामी द्वारा श्रीमारुति की स्थापना हुई थी। पास ही अहिल्याबाई का बनवाया रुद्रेश्वर मन्दिर है। यहाँ रुद्रतीर्थ, चक्रतीर्थ, पितृमुक्ति–तीर्थ, अरण्य–तीर्थ मलापकर्ष–तीर्थ तथा हंसतीर्थ आदि अनेकों तीर्थस्थल हैं।

कृष्णाबाई–मन्दिर के पास एक बड़ी धर्मशाला है। कृष्णाबाई–मन्दिर के पास ही ब्रह्मकुण्ड–तीर्थ है। इसमें स्नान महापुण्यप्रद माना जाता है। इस कुण्ड में पाँच नदियों का प्रवाह आता है। उपर्युक्त पाँच नदियों के अतिरिक्त यहाँ भागीरथी और सरस्वती नदियाँ भी मानी जाती हैं। किन्तु उनमें केवल वर्षा में जल रहता है।

यद्यपि कृष्णाबाई–मन्दिर में (ब्रह्मकुण्ड में) सातों नदियों का उद्‌गम एक स्थान पर दीखता है, तो भी इनके उद्‌गम प्रत्यक्षरूप में विभिन्न स्थानों पर प्रकट हुए हैं।

इस क्षेत्र का मुख्य मन्दिर महाबलेश्वर मन्दिर है। ऊपर बताया गया है कि महाबलेश्वर–स्वयम्भूलिङ्ग से सात नदियाँ प्रकट हुई हैं। मूर्ति पर चढ़ाया शृङ्गार भीग न जाय, इसलिये मूलमूर्ति पर आवरण चढ़ाकर तब शृङ्गार किया जाता है। मूलमन्दिर के बाहर कालभैरव की मूर्ति है। उसके पास ही नन्दी की मूर्ति है।

यह महाबलेश्वर–क्षेत्र महाराष्ट्र का अत्यन्त प्रसिद्ध तीर्थस्थान है।

5 – अमरनाथ (कश्मीर)

अमरनाथ का परम पावन क्षेत्र कश्मीर में पड़ता है। कुछ लोग अमरेश्वर नामक ज्योतिर्लिंग इसी स्थान पर बतलाते हैं। कश्मीर यात्रा का समय है अप्रैल से सितंबर और अमरनाथ यात्रा जुलाई के प्रारम्भ से पूरे अगस्ततक किसी समय की जा सकती है।

कश्मीर यात्रा के लिये अन्तिम रेलवे स्टेशन जम्मूतवी मिलता है। जम्मू से बस द्वारा श्रीनगर पहुँचा जाता है। लगभग 10–12 घंटों में बसें श्रीनगर पहुँचाती हैं। जम्मूतवी को दिल्ली तथा हावड़ा आदि महानगरों से सीधी ट्रेनें मिलती हैं। जम्मू से श्रीनगर तक तथा अन्य महानगरों से श्रीनगर को विमान सेवायें भी उपलब्ध हैं।

श्रीनगर में तथा उसके आस-पास अनेक सुन्दर दर्शनीय स्थान हैं। श्रीनगर से लगी हुई एक पहाड़ी पर श्रीआद्यशङ्कराचार्य द्वारा स्थापित शिवलिङ्ग है। इस पर्वत को ही शङ्कराचार्य कहते हैं। लगभग दो मील की कड़ी चढ़ाई के बाद यात्री मन्दिर में पहुँचते हैं। पूरा श्रीनगर जैसे मन्दिर के चरणों में पड़ा है और मूर्ति इतनी भव्य हैं कि चढ़ाई का सब श्रम दर्शन करते ही भूल जाता है। मन्दिर बहुत प्राचीन है, पुरातत्त्वविदों के मतानुसार भी यह लगभग दो सहस्र वर्ष प्राचीन है।

यात्रा के लिये श्रीनगर से मोटर-बस द्वारा पहलगाँव आना पड़ता है। पहलगाँव में होटल हैं, जिनमें ठहरने की अच्छी व्यवस्था है। तंबुओं में भी लोग ठहरते हैं। यहाँ से अमरनाथ 27 मील है और यह मार्ग पैदल या घोड़े से पार करना पड़ता है।

हिमप्रदेशीय यात्राओं में अमरनाथ की यात्रा सबसे छोटी यात्रा है, सबसे सुगम है और सबसे अधिक यात्री भी इसी यात्रा में जाते हैं। इस यात्रा के लिये कोई विशेष तैयारी आवश्यक नहीं है। ऊनी कपड़े, ऊनी मोजे, मंकी कैप(सिर ढकने की ऊनी टोपी), गुलूबंद, ऊनी दस्ताने, एक छड़ी, तीन कम्बल, थोड़ी खटाई-सूखे आलूबुखारे, बरसाती, टार्च और शक्य हो तो स्टोव। सब ऊनी सामान, छड़ी आदि पहलगाँव से भी खरीद सकते हैं। बरसाती साथ न हो तो वह पहलगाँव से किराये पर मिल जाती है। भोजन का सामान नहीं भी ले जायँ तो आगे भोजन मिलता रहेगा। कुछ जलपान का सामान साथ ले लेना चाहिये।

यात्रा के लिये पैदल जाना हो तो सामान ढोने को कुली वहाँ से लेना पड़ता है। सवारी के लिये घोड़े भी किराया लेकर लौटनेतक को मिल जाते हैं। तीन-चार यात्री साथ हों तो सामान ढोने के लिये खच्चर लेना सुविधाजनक होता है।

अमरनाथ की मुख्य यात्रा तो श्रावणी पूर्णिमा को होती है। आषाढ़ की पूर्णिमा को भी अधिक यात्री जाते हैं; किन्तु इन्हीं तिथियों में यात्रा हो, यह आवश्यक नहीं है। जुलाई के पहले सप्ताह से अगस्त के अन्ततक प्रायः प्रतिदिन पहलगाँव से यात्री जाते रहते हैं। किसी भी समय इस अवधि में जाया जा सकता है।

मार्ग

1-पहलगाँव से चन्दनवाड़ी- 8 मील, मार्ग साधारणतः अच्छा है। चन्दनवाड़ी में अच्छे होटल हैं, भोजनादि का सामान ठीक मिल जाता है। लिदर नदी के किनारे-किनारे मार्ग जाता है। अब वहाँतक बसें भी चलती हैं।

2-चन्दनवाड़ी से शेषनाग- 7 मील, यहाँ डाकबँगला है; किन्तु मेले के दिनों में भीड़ अधिक होती है, उस समय तंबू लगाकर ठहरना पड़ता है। तंबू पहलगाँव से किराये पर ले जाना होता है। मेले के अतिरिक्त दिनों में तंबू आवश्यक नहीं है। चन्दनवाड़ी से शेषनाग के बीच में 3 मील की कड़ी

चढ़ाई है। शेषनाग झील का सौन्दर्य तो अद्भुत ही है, यहाँ भी होटल हैं।

3 - शेषनाग से पञ्चतरणी - 8½ मील, शेषनाग से आगे का मार्ग हिमाच्छादित है। इस मार्ग में चलते समय हाथों तथा मुख में वैसलिन लगाना चाहिये। जहाँ मिचली आये, वहाँ खटाई चूसने से आराम मिलता है।

4 - पञ्चतरणी से अमरनाथ - 3½ मील, अमरनाथ में ठहरने का स्थान नहीं है। यात्री को पञ्चतरणी में जलपान करके अमरनाथ आना चाहिये। यहाँ स्नान तथा दर्शन करके शामतक यात्री पञ्चतरणी लौट जाते हैं। वहाँ रात्रिविश्राम के लिये धर्मशाला है।

नोट - इस यात्रा में यात्री पहले दिन पहलगाँव से चलकर रात्रि विश्राम शेषनाग में करते हैं। दूसरे दिन शेषनाग से चलकर अमरनाथतक चले जाते हैं और वहाँ से दर्शन करके लौटकर पञ्चतरणी में रात्रि विश्राम करते हैं। तीसरे दिन पञ्चतरणी से चलकर प्रायः पहलगाँव पहुँच जाते हैं। इस प्रकार यह केवल तीन दिन की पैदल यात्रा है।

समुद्रतल से लगभग 15000 - 16000 फुट की ऊँचाई पर पर्वत में यह लगभग 60 फुट लम्बी, 25 - 30 फुट चौड़ी तथा 15 फुट ऊँची प्राकृतिक गुफा है और उसमें हिम के प्राकृतिक पीठ पर हिमनिर्मित प्राकृतिक शिवलिंग है। यह गुफा एवं लिंग ही अमरनाथ के नाम से प्रसिद्ध है। यह बात सच नहीं है कि यह शिवलिंग अमावस्या को नहीं रहता और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से क्रमशः बनता हुआ पूर्णिमा को पूर्ण हो जाता है तथा कृष्ण पक्ष में धीरे - धीरे घटता जाता है। यह बात कैसे फैली, कहा नहीं जा सकता; यद्यपि बहुत लोगों ने ऐसा लिखा भी है। किन्तु पूर्णिमा से भिन्न तिथि में यात्रा करके देख लिया गया है कि ऐसी कोई बात नहीं है। हिमनिर्मित शिवलिंग जाड़ों में स्वतः बनता है और बहुत मन्दगति से क्षीण होता है। वह कभी भी पूर्णतः लुप्त नहीं होता - इतिहास में कभी पूर्ण लुप्त हुआ होगा, इसमें भी संदेह ही है।

अमरनाथ गुफा में एक गणेशपीठ तथा एक पार्वतीपीठ भी हिम से बनता है। पार्वतीपीठ 51 शक्तिपीठों में से एक है। यहाँ सती का कण्ठ गिरा था। अमरनाथ के हिमलिंग में एक अद्भुत बात है कि यह हिमलिंग तथा लिंगपीठ (हिम - चबूतरा) ठोस पक्की बरफ का होता है। जबकि गुफा से बाहर मीलोंतक सर्वत्र कच्ची बरफ ही मिलती है।

अमरनाथ - गुफा से नीचे ही पानी का एक नाला, जिसे अमरगंगा भी कहा जाता है, बहता है। यात्री उसमें स्नान करके गुफा में जाते हैं। अमरगंगातक पहुँचने से पहले लगभग एक किलोमीटर बर्फ पर चलना पड़ता है। जिस स्थान पर बर्फीला रास्ता समाप्त होता है, वहीं पर अमरगंगा है। अमरगंगा में स्नान करने की विधि यह है कि मात्र एक लंगोट या कच्छे में नंगे बदन गोता लगाये और वहाँ से गीले बदन ही गुफा में जाकर भगवान् का दर्शन करे और पुनः उसी नाले पर आकर वस्त्र पहने।

बहुत से श्रद्धालु कश्मीरी पण्डित अब भी इस विधि से स्नान एवं दर्शन करते हैं। स्नान के बाद स्नान करनेवालों का शरीर वायु तथा शरीर की गर्मी से जब अपने आप सूखने लगता है तब ऐसा मालूम होता है कि मानों उन लोगों ने अपनी देह पर भस्म रमा ली हो।

अमरगंगा से लगभग दो फर्लांग चढ़ाई पर जाकर गुफा में जाना पड़ता है। गुफा में मुख्य शिवलिंग को छोड़कर दो और हिम के छोटे विग्रह बनते हैं, जिन्हें पार्वती एवं गणपति की मूर्तियाँ कहा जाता है। गुफा में जहाँ-तहाँ बूँद-बूँद करके जल टपकता रहता है। कहा जाता है कि गुफा के ऊपर पर्वत पर श्रीरामकुण्ड है और उसी का जल गुफा में टपकता है। गुफा के पास एक स्थान से सफेद भस्म जैसी मिट्टी निकलती है, जिसे यात्री प्रसादस्वरूप लाते हैं। गुफा में जंगली कबूतर भी दिखायी देते हैं। उनकी संख्या विभिन्न समयों में विभिन्न देखी गयी है। यदि वर्षा न होती हो, बादल न हो, धूप निकली हो तो अमरनाथ गुफा-में शीत(ठंढ) का अनुभव नहीं होता।

इस पुण्य-स्थान की यात्रा का सर्वाधिक महत्त्व श्रावण की पूर्णिमा को माना गया है। चतुर्दशी के दिन यात्री लोग पञ्चतरणी पहुँच जाते हैं। यह स्थान अमरनाथ पर्वत की तलहटी में उसके द्वाररूप में स्थित है। पूर्णिमा के दिन यात्रीलोग पर्वत पर चढ़कर गुफा में भगवान् का दर्शन कर उसी दिन पञ्चतरणी को वापस लौट आते हैं।

गुफा में एक ब्राह्मण देवता पुजारी के रूप में पूजा इत्यादि ग्रहण करते हैं। ये सज्जन श्रीनगर से यात्रियों के अग्रणीरूप में यहाँ आते हैं। इनके हाथ में एक चाँदी की छड़ी रहती है। जो इनके पद को सूचित करती है। यात्रा से लौटने पर यह छड़ी पुन: श्रीनगर के मन्दिर में रख दी जाती है।

6-भुवनेश्वर का लिङ्गराज-मन्दिर

उड़ीसा प्रान्त में जगन्नाथधाम के निकट, हावड़ा-वाल्टेयर रेलवे लाइन पर कटक-खुरदारोड के बीच में कटक से 18 मील दूर भुवनेश्वर स्टेशन है। भुवनेश्वर दिल्ली, कलकत्ता आदि महानगरों से रेलमार्ग द्वारा जुड़ा हुआ है। रेलवेस्टेशन से भुवनेश्वर का मुख्य मन्दिर लगभग 6-7 किलोमीटर दूर है। पुरी से भुवनेश्वर लगभग 40 किलोमीटर होगा। यह स्थान उत्कल की प्राचीन राजधानी थी और यह अब भी है। स्टेशन से मुख्य मन्दिर के पासतक बस, आटोरिक्शा तथा टैक्सी आदि सवारियाँ जाती हैं।

भुवनेश्वर काशी के समान ही शिव-मन्दिरों का नगर है। कहा जाता है कि यहाँ कई हजार मन्दिर थे। अब भी मन्दिरों की संख्या कई सौ है। लोग इसे उत्कल-वाराणसी और गुप्तकाशी भी कहते हैं। किन्तु पुराणों में इसे 'एकाम्रक्षेत्र' कहा गया है।

पुरी के समान यहाँ भी महाप्रसाद का माहात्म्य माना जाता है, किन्तु यहाँ मुख्य मन्दिर के कोट के भीतर ही महाप्रसाद में स्पर्शादि दोष नहीं मानते। मन्दिर की परिधि से बाहर प्रसाद को स्पर्श-दोष से बचाने का ध्यान रखा जाता है। प्राय: यात्री मन्दिर-परिधि में नृत्यमण्डप में प्रसाद ग्रहण करते हैं।

भुवनेश्वर पहुँचते ही एक विस्तृत सरोवर दीख पड़ता है। इसे बिन्दुसरोवर कहते है। इसी के समीप भगवान् भुवनेश्वर का (जिन्हें 'लिङ्गराज' भी कहते हैं) विशाल एवं गगनचुम्बी मन्दिर है। कहा जाता है, किसी समय बिन्दुसरोवर के आस-पास कम से कम सात हजार मन्दिर थे। इस समय वहाँ केवल पाँच सौ के करीब मन्दिर हैं। इन सबमें प्रधान मन्दिर भगवान् भुवनेश्वर का है जिनके दर्शनार्थ दूर-दूर से अनेक यात्री प्रतिमास आते रहते हैं। भुवनेश्वर के दर्शन तथा बिन्दुसरोवर में स्नान, तर्पण, पिण्डदान आदि करने का ब्रह्मपुराण, पद्मपुराण, कपिलसंहिता आदि ग्रन्थों में बड़ा माहात्म्य लिखा है। सरोवर के बीच एक छोटा सा मन्दिर है, जहाँ उत्सव के अवसरों पर भगवान् की चलमूर्ति पधरायी जाती है। वैशाख महीने में यहाँ चन्दनयात्रा (जलविहार) का उत्सव होता है।

कुछ लोगों के अनुसार सिद्धपुर की जगह इसी बिन्दुसरोवर की भारतवर्ष के पाँच प्रधान सरोवरों में गणना है। शेष चार सरोवरों के नाम ये हैं- (1) मानसरोवर (तिब्बत), (2) पम्पासरोवर, जो दक्षिण में गुन्तकल नामक स्थान के निकट है, (3) पुष्करसरोवर (राजस्थान) और (4) नारायणसरोवर जो श्रीद्वारका पुरी के समीप है। यह सरोवर 1300 फुट लम्बा और 700 फुट चौड़ा है और इसकी औसत गहराई आठ फुट है। कहते हैं, इसमें भारतवर्ष के सारे तीर्थों एवं पुण्य सरिताओं का जल डाला हुआ है। बिन्दुसरोवर के अतिरिक्त इस पुण्यक्षेत्र की सीमा में अन्य कई सरोवर भी हैं, जिनके नाम ये हैं - पापनाशिनी, गङ्गा-यमुना, कोटितीर्थ, ब्रह्मकुण्ड, मेघकुण्ड, अलाबुकुण्ड, रामकुण्ड (अशोककुण्ड), देवीपदहर (देवीपापहरा), गौरीकुण्ड तथा केदारकुण्ड। इनमें से कोटितीर्थ में केवल वर्षाकाल में जल रहता है, बाकी समय यह सूखा रहता है। गौरीकुण्ड में पानी का एक स्रोत है जिसके कारण इसका जल बारहों मास बना रहता है। गौरीकुण्ड का ही जल केदारकुण्ड में जाता है। इन दोनों कुण्डों का जल स्वास्थ्य के लिये बड़ा हितकर एवं पाचक माना जाता है। देवीपदहर (देवीपापहरा) के सम्बन्ध में यह कथा प्रचलित है कि भगवती दुर्गा ने इसी स्थान पर दो दैत्यों के साथ युद्ध कर उनका वध किया था। युद्ध के समय भगवती के पदाघात से यहाँ एक गड्ढा हो गया और उसी में जल भर जाने से एक छोटी सी झील बन गयी, जो देवीपदहर के नाम से प्रसिद्ध हो गयी। बिन्दु सरोवर से लगभग दो फर्लांग दूर नगर के बाह्यभाग में एक बड़े घेरे के भीतर ब्रह्मेश्वर-मन्दिर तथा कई और मन्दिर हैं। इसी घेरे में ब्रह्मकुण्ड, मेघकुण्ड, रामकुण्ड तथा अलाबुकुण्ड हैं। इन कुण्डों के समीप मेघेश्वर, रामेश्वर एवं अलाबुकेश्वर मन्दिर हैं। इनमें से ब्रह्मकुण्ड में स्नान किया जाता है। इस कुण्ड में गोमुख से बराबर जल गिरता रहता है और एक मार्ग से बाहर जाता रहता है।

भुवनेश्वर का मन्दिर बहुत प्राचीन है। केसरीवंश के आदिम राजा जजातिकेसरी ने सन् 580 ई० में इसे बनवाना प्रारम्भ किया था। और उनके जीवनकाल में तथा उनके परवर्ती दो नरेशों के राज्यकाल में यह काम बराबर जारी रहा। केसरीवंश के चतुर्थ नरेश ललाटेन्दु केसरी को सन् 657 ई० में इस महान्

कार्य को सम्पूर्ण करने का श्रेय प्राप्त हुआ। इस प्रकार इस मन्दिर के बनने में पौन शताब्दी से ऊपर लगा और लगातार चार राजाओं के प्रयत्न से यह कार्य सम्पन्न हुआ।

केसरीवंश के अन्तिम राजा ने भगवान् भुवनेश्वर का भोगमन्दिर तथा पुजारियों के रहने के स्थान इत्यादि बनवाया और मन्दिर के भोग-राग के लिये स्थायी प्रबन्ध कर दिया।

श्रीलिङ्गराजमन्दिर भुवनेश्वर का मुख्य मन्दिर है। श्रीलिङ्गराज का ही नाम भुवनेश्वर है। इस मन्दिर के चारों ओर सात फुट ऊँची एक मोटी पत्थर की दीवार है जो 520 फुट लम्बी और 500 फुट चौड़ी है। इस प्राकार में चारों ओर चार द्वार हैं, जिनमें मुख्य द्वार को सिंहद्वार कहते हैं। इस प्राकार के अन्दर भिन्न-भिन्न देवताओं के छोटे-मोटे सौ मन्दिर हैं और उनके बीच में भगवान् भुवनेश्वर का मन्दिर है। इस मन्दिर के चार भाग हैं, जो क्रमश: भोगमन्दिर, नटमन्दिर, जगमोहन एवं गर्भगृह कहलाते हैं। ये चारों स्थान एक दूसरे से सम्बद्ध हैं, अर्थात् एक मन्दिर से दूसरे मन्दिर में जाने के लिये मार्ग बना हुआ है। भोगमन्दिर में अन्नकूट इत्यादि के अवसर पर, जब अधिक पैमाने में भोग लगाया जाता है, भोग की सामग्री सजायी जाती है और उसमें का थोड़ा सा अंश गर्भगृह के भीतर भगवान् के सामने पधराया जाता है। नटमन्दिर का उपयोग विशेष उत्सवों के दिन होता है, जगमोहन में दर्शकगण एकत्र होते हैं और वहीं से भगवान् का दर्शन-लाभ करते हैं और गर्भगृह में भगवान् का श्रीविग्रह विराजमान रहता है। इस प्रकार इन चारों स्थानों का अलग-अलग नियमितरूप से उपयोग होता है। मन्दिर के प्राकार के प्रधान द्वार, सिंहद्वार, के ठीक सामने अरुणस्तम्भ नाम का एक बड़ा सुन्दर स्तम्भ है।

गर्भगृह के ऊपर 190 फुट ऊँचा शिखर बना हुआ है जो एक ही पत्थर का गढ़ा हुआ मालूम होता है, क्योंकि उसमें कहीं पर भी जोड़ अथवा चूने-मसाले का उपयोग किया हुआ नहीं दिखायी देता। मन्दिर भी एक विशेष कारीगरी का नमूना है इसके अतिरिक्त मन्दिर के भीतर चारों ओर अनेक प्रकार के बेल-बूटे और मूर्तियाँ खुदी हुई हैं जो दर्शकों के मन को मोह लेती हैं। इस प्रकार स्थापत्य-कला की दृष्टि से मन्दिर का बड़ा महत्त्व समझा जाता है।

सिंहद्वार से प्रवेश करने पर पहले गणेशजी का मन्दिर मिलता है। आगे नन्दीस्तम्भ है और उससे आगे मुख्य मन्दिर का भोगमण्डप है। इसी मण्डप में हरि-हर-मन्त्र से लिङ्गराजजी को भोग लगाया जाता है।

भोगमण्डप के आगे नाट्यमन्दिर(जगमोहन) है। आगे मुखशाला है, जिसमें दक्षिण ओर द्वार है। यहाँ से आगे विमान(श्रीमन्दिर) है। इस निज-मन्दिर की निर्माणकला उत्कृष्ट है। इसके बाहरी भाग में अत्यन्त मनोरम शिल्प-सौन्दर्य है। भीतर का अंश भी मनोहर है।

श्रीलिङ्गराजजी के निज-मन्दिर में चपटा अगठित विग्रह है। यह वस्तुत: बुद्-बुद-लिङ्ग है। शिला में बुद्बुदाकार उठे हुए अङ्कुर-भागों को बुद्-बुद-लिङ्ग कहा जाता है। यह चक्राकार

होने से हरि-हरात्मक लिङ्ग माना जाता है और हरिहरात्मक मानकर हरि-हर मन्त्र से इनकी पूजा होती है। कुछ लोग त्रिभुजाकार होने से इन्हें हरगौर्यात्मक तथा दीर्घ होने से कालरुद्रात्मक भी मानते हैं। यात्री भीतर जाकर स्वयं इनकी पूजा कर सकते हैं। हरिहरात्मक लिङ्ग होने से यहाँ त्रिशूल मुख्यायुध नहीं माना जाता, पिनाक(धनुष) ही मुख्यायुध माना जाता है।

भगवान् भुवनेश्वर का लिङ्गविग्रह बड़ा विशाल है। उसका व्यास करीब 7 फुट का है और ऊँचाई भी करीब-करीब उतनी ही है। इतना ऊँचा शिवलिङ्ग शायद ही कहीं देखने को मिलेगा। लिङ्ग की आकृति भी कुछ विचित्र सी ही है। वह एक पाषाणस्तम्भ सा दिखायी देता है। उसमें तीन विभाग से नजर आते हैं जो सम्भवतः ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव के द्योतक हैं। लिङ्ग के नीचे बराबर जल भरा रहता है और दूध, दही तथा जल से उसे स्नान कराया जाता है। गर्भगृह की बनावट अन्य बड़े शिवमन्दिरों की भाँति ऐसी है कि उसके अन्दर प्रकाश बहुत कम आता है, जिससे दिन में भी दीपक के प्रकाश से भगवान् के दर्शन होते हैं।

भुवनेश्वर के अन्य प्रधान मन्दिर ये हैं - कपिलेश्वर, अनन्त वासुदेव, केदारेश्वर, मुक्तेश्वर, ब्रह्मेश्वर तथा परशुरामेश्वर। कपिलेश्वर महादेव का दर्शन करने के लिये बहुत से ऐसे यात्री आते हैं जो किसी असाध्य रोग से पीड़ित होते हैं और उनमें से कई रोगमुक्त होते देखे जाते हैं। अनन्त-वासुदेव के मन्दिर में श्रीकृष्ण एवं बलदाऊजी की मूर्तियाँ हैं। लोग भुवनेश्वर का दर्शन करने के पूर्व कृष्ण- बलदेव का दर्शन अवश्य करते हैं। यह मन्दिर बिन्दुसरोवर के तट पर है। इस मन्दिर का निर्माण सन् 1025 ई० में बङ्गाल के भट्ट महादेव नामक ब्राह्मण ने करवाया था। अनन्त-वासुदेव एकाम्रक्षेत्र के अधिष्ठातृ देवता हैं। भगवान् शंकर ने इन्हीं के आग्रह पर इस क्षेत्र में स्थायी डेरा डाला। बिन्दुसरोवर के मणिकर्णिका घाट पर ऊपरी भाग में यह मन्दिर है। मुख्य मन्दिर में सुभद्रा, नारायण तथा लक्ष्मीजी के विग्रह हैं। केदारेश्वर का मन्दिर सबसे प्राचीन है, यह भुवनेश्वर से भी पहले का बना हुआ है। मुक्तेश्वर का मन्दिर कला की दृष्टि से बहुत सुन्दर है। ब्रह्मेश्वर तथा परशुरामेश्वर के मन्दिर नवीं शताब्दी के बने हुए हैं और स्थापत्य-कला के उत्तम नमूने माने जाते हैं। इनके अतिरिक्त एक पार्वतीजी का मन्दिर भी है, जो बड़ा सुन्दर है।

लिंगराजमन्दिर की प्रसिद्धि सुनकर एक बार भारत के भूतपूर्व वायसराय - लार्ड कर्जन बड़ी उत्सुकता से यहाँ आये, किन्तु विधर्मी होने के कारण उन्हें मन्दिर के प्राकार के भीतर नहीं जाने दिया गया। अतः प्राकार के बाहर उनके लिये एक बहुत ऊँचा चबूतरा सा बनवाया गया, जिसपर चढ़कर उक्त वायसराय महोदय ने मन्दिर देखने की अपनी हविश पूरी की।

भुवनेश्वर से पाँच मील की दूरी पर उदयगिरि और खण्डगिरि की प्रसिद्ध पहाड़ियाँ हैं, जिन्हें काट - काट कर कई गुहा-मन्दिर तथा महल बनाये गये हैं। यहाँ पर कुल मिलाकर पचास-साठ गुफाएँ होंगी।

भुवनेश्वर से इतनी ही दूर एक और सुविख्यात स्थान है। यह है धौली का अश्वत्थामा-पर्वत, जिसे काट-काट कर अनगढ़ हाथी का रूप दिया गया है और इस हाथी पर सम्राट् अशोक के सुप्रसिद्ध आदेश खुदे हुए हैं। भुवनेश्वर से बीस मील की दूरी पर समुद्रतट पर जगत् प्रसिद्ध कोणार्क के विशाल सूर्य मन्दिर हैं जो वास्तव में दर्शनीय हैं।

भुवनेश्वर के संबंध में पौराणिक कथा इस प्रकार है। काशी में सभी तीर्थाधिदेवों के बस जाने पर भगवान् शंकर को एकान्त में रहने की इच्छा हुई। देवर्षि नारदजी ने एकाम्रक्षेत्र की प्रशंसा की। यहाँ आकर शंकरजी ने क्षेत्रपति अनन्त वासुदेवजी से कुछ काल निवास की अनुमति माँगी। भगवान् वासुदेव ने शंकरजी को यहाँ नित्य निवास का अनुरोध करके रोक लिया।

7-इलोरा तथा एलिफेण्टा की गुफाओं के शिव-मंदिर

इलोरा की गुफाएँ दौलताबाद स्टेशन से सात मील की दूरी पर स्थित हैं। स्टेशन से गुफाओंतक पक्की सड़क बनी हुई है। एक पूरी की पूरी पहाड़ी को काटकर मन्दिरों के रूप में परिणत कर दिया गया मालूम होता है। मन्दिरों की बनावट में चूना-मसाला अथवा किसी प्रकार के कील काँटे नहीं लगे हैं। मन्दिरों की संख्या पच्चीस-तीस से अधिक है। हिन्दू मन्दिरों के अतिरिक्त बौद्ध एवं जैन मन्दिर भी हैं। हिन्दू मन्दिरों में कैलास नाम का मन्दिर सबसे बड़ा एवं सुन्दर है। इसे लोग संसार का 'अष्टम आश्चर्य' कहते हैं और इसे देखने के लिये लोग दूर-दूर से आते हैं। पुरातत्त्ववेत्ताओं के अनुमान से इस मन्दिर को बने लगभग हजार-ग्यारह सौ वर्ष हुए होंगे। इस जंगी दुमंजिले मन्दिर को बनवाने में लगभग बीस-पचीस वर्ष लगे होंगे। यह मन्दिर भगवान् शंकर का है, जिनका मानुषविग्रह पत्थर के अन्दर खुदा हुआ है। मन्दिर की बाहरी तथा भीतरी दीवारों पर रामायण एवं महाभारत की प्रधान-प्रधान घटनाएँ मूर्तिरूप में खुदी हुई हैं। एक स्थान पर यह दृश्य दिखलाया गया है कि रावण शिवजी के कैलास को उठाने की चेष्टा कर रहा है। आततायी मुसलमानों ने यहाँ की अपूर्व कारीगरी को भी नष्ट-भ्रष्ट करने में कोई बात उठा न रक्खी। परन्तु मन्दिरों की वर्तमान दशा को देखकर भी दर्शकों को दंग रह जाना पड़ता है। कहते हैं, सम्राट् दन्तिदुर्ग ने आठवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इस मन्दिर को बनवाया था। कुछ लोगों के मत में इलोरा का प्राचीन नाम शिवालय है। उन लोगों के मत में घुश्मेश्वर नामक ज्योतिर्लिङ्ग यहीं विराजमान है।

एलिफेण्टा के गुहा-मन्दिर बम्बई से प्राय: छ: मील दूर एक टापू पर अवस्थित हैं। यात्री लोग इस स्थान को नावों अथवा स्टीमरों पर बैठकर जाते हैं। इस टापू पर दो बड़े-बड़े पर्वत हैं जिनके ऊपरी भाग को काट-काट कर करीब डेढ़ या दो हजार वर्ष पूर्व हिन्दू शिल्पकारों ने भगवान् शङ्कर, के कई मन्दिर बनाये थे। इन मन्दिरों में भगवान् शङ्कर, देवी पार्वती, अर्द्धनारीश्वर, नटराज तथा ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश की त्रिमूर्ति विशेषरूपेण द्रष्टव्य है। लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व बम्बई तथा उसके आस-पास

के टापू पुर्तगालवालों के अधीन थे, ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय यहाँ के धर्मान्ध ईसाइयों ने इस स्थान की प्रायः सभी मूर्तियों तथा मन्दिरों की सुन्दरता को बुरी तरह से नष्ट-भ्रष्ट किया है। फिर भी इन भग्न मूर्तियों की कला को देखकर प्राचीन गौरव का स्मरण हो आता है। इन गुहा-मन्दिरों में से मुख्य मन्दिर में भगवान् शङ्कर लिङ्गरूप में विराजमान हैं। गुफाओं के ठीक नीचे एक सुन्दर स्वच्छ जल का कुण्ड बना हुआ है। समुद्रतट से गुफाओंतक पहुँचने के लिये सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। बम्बईवाले इस स्थान को धारापुरी कहते हैं।

8—खजुराहो के शिवमन्दिर

खुजराहो लगभग एक हजार वर्ष पूर्वतक हजारों वर्षों से वीरभूमि बुन्देलखण्ड की राजधानी रह चुका है। यहाँ के सुविशाल शिव और विष्णु के मन्दिर तथा जैन एवं बौद्ध मन्दिर भारतीय प्राचीन शिल्पकला के जीते जागते नमूने हैं। यह एक संयोगकी बात है कि मार्ग की दुर्गमता के कारण ध्वंसकारी मुसलमान यहाँतक नहीं पहुँच सके, अन्यथा खजुराहो के मन्दिर आज इस अक्षुण्ण अवस्था में नहीं मिलते।

भारत के प्रसिद्धतम कलापूर्ण मन्दिरों में खजुराहो के मन्दिर हैं। महोबा से मानिकपुर-झाँसी लाइन पर लगभग 50 कि. मी. आगे उसी लाइन में हरपालपुर स्टेशन है, जहाँ से खजुराहो के लिये मार्ग है। यह स्थान छत्रपुर (छतरपुर) से 27 तथा पन्ना से 25 मील है। यहाँ जाने के लिये पन्ना, छत्रपुर, सतना या महोबा से मोटर-बसें मिल जाती हैं।

चंदेल नरेशों के रहने का स्थान महोबा था। कालिञ्जर में उनका दुर्ग था और खजुराहो में उन्होंने मन्दिर बनवाये। खजुराहो में कुल 30 मन्दिर हैं, जिनमें आठ जैन-मन्दिर हैं। हिन्दु-मन्दिरों में कंडरिया महादेव का मन्दिर सबसे प्रसिद्ध है; किन्तु उतने ही बड़े मन्दिर यहाँ आठ-दस और हैं। प्रत्येक मन्दिर ऊँचे चबूतरे पर बना है। इन मन्दिरों में बहुत कारीगरी है। कनिंघम (प्रसिद्ध पुरातत्त्वविद) ने केवल कंडरिया महादेव मन्दिर में दो फुट से ऊँची मूर्तियाँ गिनीं तो वे 872 मिलीं। छोटी मूर्तियाँ तो हजारों हैं।

प्रसिद्ध चीनी यात्री हुएन्त्साङ्ग, महमूद गजनवी के साथ आया हुआ आबूरिहान और इनके बाद आया हुआ इब्नबतूता - इन सबों के भ्रमण-ग्रन्थों में खजुराहो की समृद्धि तथा महत्त्व का वृत्तान्त मिलता है। इब्नबतूता चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भारतवर्ष में आया था। उसने लिखा है कि खजुराहो में बड़े-बड़े जटाधारी कृशशरीर तपस्वी एवं योगी रहते हैं जिनसे यन्त्र-मन्त्र सीखने के लिये मुसलमानतक जाते हैं। परन्तु खेद की बात है कि इस समय यह स्थान उजाड़ पड़ा है और बन्दोबस्त के कागजों में 'गैर-आबाद' लिखा हुआ है। इस समय भी खजुराहो में तीस बड़े-बड़े मन्दिर विद्यमान हैं, इनमें से शङ्करजी के दो मन्दिर कँडरिया महादेव और विश्वनाथ महादेव-विशेषरूप से द्रष्टव्य हैं और उन्हीं का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है। महाशिवरात्रि के अवसर पर यहाँ बड़ा भारी मेला लगता है, जिसमें शामिल होने के लिये दूर-दूर से लाखों आदमी आते हैं और मीलोंतक पृथिवी जनाकीर्ण दीखती है।

कँडरिया महादेव का मन्दिर खजुराहो में सबसे बड़ा है। इसका निर्माण शास्त्रविधि के अनुसार हुआ है। भुवनेश्वर की तरह इसमें भी कोई ऐसा स्थान नहीं है जहाँ पत्थर को काटकर मूर्तियाँ न बनायी गयी हों। भगवान् का लिङ्गविग्रह चार फुट मोटा है। मन्दिर दसवीं शताब्दी का बना हुआ बतलाया जाता है। विश्वनाथजी का मन्दिर भी इसी ढंग का बना हुआ है। अन्तर केवल इतना है कि यह मन्दिर कुछ छोटा है और इसके चारों कोनों पर चार छोटे-छोटे मन्दिर बने हुए हैं। मन्दिर के भीतर तो भगवान् लिङ्गरूप में विराजमान हैं ही, साथ ही गर्भगृह के द्वार पर नन्दीश्वर पर आरूढ़ भगवान् का मानुषविग्रह भी है। भगवान् के एक ओर हंस पर आरूढ़ ब्रह्माजी की तथा दूसरी ओर गरुड़ पर सवार भगवान् विष्णु की मूर्ति है। मन्दिर के बाहर छोटी-मोटी और भी अनेक मूर्तियाँ हैं। इस मन्दिर की मूर्तियों की संख्या भी सब मिलाकर छ: सौ से दो-चार ऊपर ही है। कँडरिया महादेव-मन्दिर में मूर्तियों की संख्या इससे ज्यादा है।

श्रीमान् छतरपुर नरेश की कृपा से यहाँ एक म्यूजियम भी बना हुआ है जिसमें अनेक प्राचीन मूर्तियाँ संगृहीत हैं। खजुराहो के विषय में सुप्रसिद्ध कवि चन्दबरदाई ने अपने 'पृथ्वीराज-रासो' में बहुत कुछ लिखा है।

9—काँगड़ा का वैद्यनाथ—मन्दिर

काँगड़े की घाटी तथा वहाँ के सुरम्य और स्वास्थ्यप्रद पार्वत्य प्रदेश को, वहाँ के सीधे-सादे, भोले-भाले गद्दी जाति के लोगों को और उस प्रदेश में स्थित भगवती ज्वालामुखी, काँगड़े की देवी तथा काँगड़े के वैद्यनाथ नामक शिवमन्दिर को बहुत कम लोग जानते हैं। भारत का यह भाग अत्यन्त सुन्दर है और इसमें डलहौजी, धर्मशाला, शिमला, कुल्लू इत्यादि सुरम्य नगर स्थित हैं। पठानकोट से जोगीन्द्रनगरतक रेल की लाइन है। काँगड़ा से यह स्थान लगभग 45 कि. मी. होगा। सुप्रसिद्ध वैद्यनाथजी का मन्दिर इसी लाइन पर पड़ता है। झारखण्ड का वैद्यनाथ धाम इससे बिल्कुल भिन्न है। वैद्यनाथजी का मन्दिर कीरग्राम नामक गाँव में बना हुआ है और पुरातत्त्ववेत्ताओं का अनुमान है कि यह मन्दिर कम से कम हजार, डेढ़ हजार वर्ष पुराना होगा।

मन्दिर की बनावट निराली ही है और बड़ी सुन्दर है। इसके भीतर भगवान् शङ्करजी लिङ्गरूप में विराजमान हैं। आस-पास के प्रान्तों के लाखों हिन्दू यात्री प्रति वर्ष ज्वालामुखी और वैद्यनाथजी के मन्दिर की यात्रा करते हैं। पंजाब, हरयाणा एवं हिमाचल के शिवमन्दिरों में यदि इस मन्दिर को अग्रगण्य कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी। यहाँ (आस-पास) के लोग इसी बैजनाथ (वैद्यनाथ) मन्दिर को द्वादश ज्योतिर्लिंगों में मानते हैं। इसी के पास सिद्धनाथ महादेव का मन्दिर है, जो इससे भी पुराना कहा जाता है और जिसमें अनगढ़ शिवलिङ्ग विराजमान है।

10—तारकेश्वर मन्दिर

कलकत्ते के निकट ही रेलवे की एक शाखा पर तारकेश्वर भगवान् का प्रसिद्ध स्थान है। बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा के लोगों में इस मन्दिर की काफी मान्यता है। मन्दिर के समीप ही दूधगङ्गा नाम का एक सरोवर है, इसी का जल यहाँ के लोगों के व्यवहार में आता है। भगवान् तारकेश्वर की महिमा दूर-दूरतक फैली हुई है। असाध्य रोगों से मुक्त होने के लिये प्रायः बहुत से यात्री यहाँ धरना दिये पड़े रहते हैं। यहाँ शिवरात्रि तथा चैत्रसंक्रान्ति के दिन बहुत बड़ा मेला लगता है। शिवरात्रि के दिन भक्त लोग निराहार रहकर रातभर जागरण करते हैं। चैत्रसंक्रांन्ति के दिन लोग इष्ट-प्राप्ति के लिये अपनी पीठ में बड़ी-बड़ी कीलें ठोंककर भगवान् के सामने लटक जाया करते थे, किन्तु सरकार की ओर से आजकल यह प्रथा बन्द कर दी गयी है।

11—चूड़धार के श्रीगुल

हिमाचल-प्रदेश के ऊपरी भाग शिमला, सोलन, सिरमौर और इनके आस-पास के क्षेत्रों में भगवान् शिव के मन्दिर स्थान-स्थान पर हैं। इन क्षेत्रों में प्रायः एक भी गाँव ऐसा नहीं है, जहाँ भगवान् शिव का मन्दिर न हो। इस क्षेत्र में अन्य देवताओं की अपेक्षा भगवान् शिव की उपासना अधिक प्रचलित है।

इन क्षेत्रों में प्रायः दो प्रकार के शिव-मन्दिर हैं। कुछ मन्दिरों में शिवलिंग एवं शिव-परिवार की अचल मूर्तियाँ स्थापित हैं, जिनकी पूजा-आराधना मन्दिर में ही की जाती हैं। किन्तु दूसरे प्रकार के शिव-मन्दिरों में भगवान् शिव की चल-मूर्तियाँ पालकी पर स्थापित रहतीं हैं। 'डोम' अर्थात् 'देव' कहलानेवाली शंकरजी की मूर्तियाँ पालकी पर स्थापित रहती हैं, जिनके आगे-पीछे दो-दो बाँस लगे होते हैं। दो व्यक्ति मिलकर इस पालकी को उठाते हैं। यहाँ के लोग अपनी इच्छित कामना की पूर्ति के लिये चल-मूर्ति को बड़ी ही श्रद्धा से मन्दिर से अपने घर ले जाते हैं और यज्ञ कराते हैं।

हिमाचल-प्रदेश में सिरमौर जिले के राजगढ़ तहसील में लगभग 10380 फुट ऊँची चूड़धार की चोटी पर भगवान् शिव की श्रीगुल के नाम से पूजा की जाती है। इन्हें चूड़ेश्वर महादेव[1] भी कहा जाता है। चूड़धार में लगभग 8 मासतक बर्फ जमी रहती है। भगवान् शिव का मन्दिर इसी चोटी पर स्थित है। यह मन्दिर पहाड़ी मन्दिरों की तरह बना हुआ है, परन्तु पहाड़ों के मन्दिरों से थोड़ा बड़ा है। भगवान् शिव के इस मन्दिर में शिवलिंग के नीचे से जलधारा बहती है। मन्दिर से लगभग एक किलोमीटर ऊपर एक सुनसान चोटी पर पद्मासन लगाये भगवान् शिव की 10 फुट ऊँची एक प्रतिमा बनी हुई है। इस स्थान को 'लिंग-पर' के नाम से पुकारा जाता है। यह चोटी इस क्षेत्र की सबसे ऊँची-चोटी है। इस चोटी से हरिद्वार, चण्डीगढ़ आदि स्थान दिखायी देते हैं।

---

1. प्रस्तुत पुस्तक इन्हीं महादेव को समर्पित है। लेखक के गुरुदेव शिवलौती महाराज के इष्ट भी ये ही हैं।

कहा जाता है कि प्राचीन काल में इन्द्रदेव ने एक बार इतनी वर्षा और ओलावृष्टि की कि पृथिवी पर जरा भी अन्न उत्पन्न न हो सके, तब भगवान् शंकर ने इस पर्वत पर बैठकर उस ओलावृष्टि जिसे यहाँ 'शराटली' कहते हैं- को रोका। तभी यहाँ पर स्थित इन शंकर का नाम शरु से बचानेवाला श्रीगुल पड़ा। श्रीगुल को शिमला, सोलन और सिरमौर में सबसे अधिक पूजा जाता है। इन जिलों के प्रत्येक गाँव में एक बड़ी शिला अर्थात् बड़े सफेद पत्थर को श्रीगुल का ढोक मानकर, अर्थात् इस पत्थर पर श्रीगुल का वास मानकर, इनकी पूजा की जाती है। यहाँ के लोगों द्वारा इन्हें वर्ष के प्रारंभिक नवरात्रों में चौमुखी दीपक जलाकर, नारियल चढ़ाकर तथा इनकी प्राचीन गाथाएँ गाकर पूजा की जाती है। जिससे श्रीगुल महाराज प्रसन्न हो पूरे वर्ष समय-समय पर अच्छी वर्षा करते रहें, फसलें अच्छी हों तथा विनाशक वर्षा या ओलावृष्टि न हो।

आज भी यदि कभी अधिक वर्षा हो जाय या अधिक सूखा पड़ जाय तो यहाँ के लोग श्रीगुल के नाम पर चौमुखी दीपक जलाकर अनावृष्टि अथवा अतिवृष्टि अथवा प्राकृतिक प्रकोपों से रक्षा के लिये प्रार्थना करते हैं।

चूड़धार(मन्दिर) जाने के लिये शिमला से लगभग 150 कि. मी. दूर स्थित सराह गाँवतक बस से यात्रा करनी पड़ती है। बसें शिमला से ही मिलेंगी। सराह गाँव से 10 कि. मी. की कड़ी चढ़ाई के बाद मन्दिरतक पहुँचा जाता है। मन्दिर का रास्ता घने जंगलों से होकर गुजरता है जो एकदम सुनसान है। रास्ते में कुछ खाने की चीजें नहीं मिलती। चीड़-देवदार के घने जंगलों से गुजरते समय भीनी-भीनी गुग्गुल की तरह सुगंध आती रहती है। जंगल के कुछ ऐसे क्षेत्र भी हैं जहाँ से गुजरनेवाले लोगों में से कुछ को नशा सा हो जाता है। दूसरे शब्दों में उस जंगल एवं पर्वत को गंधमादन कह सकते हैं। चूड़धार जाने का दूसरा रास्ता(सराह से अलग) राजगढ़ से नौलाधार होते हुए है। राजगढ़ एवं नौलाधार के लिये सोलन से बसें उपलब्ध हैं। राजगढ़ से चूड़ेश्वर मन्दिर का रास्ता लम्बा(20 कि. मी.) है परन्तु उस रास्ते में प्राकृतिक सौन्दर्य ज्यादा है। रास्ते में खाने-पीने की सामग्री नहीं मिलने के कारण उस रास्ते से लोग कम जाते हैं।

चूड़धार में शिवरात्रि आदि पर्वों पर मेला लगता है। काफी यात्री आते हैं। परन्तु ऊपर भीड़ ज्यादा होने से रहने में असुविधा रहती है।

(यह लेख गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित 'शिवांक', 'शिवोपासनांक', 'तीर्थांक', जैना पब्लिशिंग कम्पनी दिल्ली द्वारा प्रकाशक 'औरंगाबाद, दौलताबाद, एलोरा एवं अजंता' तथा हरिकुमारी आर्टस् कन्याकुमारी द्वारा प्रकाशित 'साउथ इण्डिया-ए ट्रेवेल गाईड' पर आधारित है।)

❁❁❁❁❁